जगन्मयी देवी दुर्गा

आज शरदीय सप्तमी तिथि; द्विभुजा तारिणी देवी की शिलामयी मूर्ति में महामाया माँ की पूजा हो रही है। प्रकृति-देवी आनन्द मुखर हो उठी है; धनी-दरिद्र सभी आनन्दमयी माँ के पूजा-उत्सव में रम गये है। क्षुद्र तारापुर ढाक, ढोल और मृदंग के शब्द से मुखरित है। पूजा के इन दिनों में गाँव के बालक-बालिकाएं आनन्द से आत्महारा हो जाते है। पूजा के उपलक्ष्म में विद्यालयादि सब बन्द हो गये, इसलिए कनकपुर के पंडितमहाशय साधुसंग करने के अभिप्राय से तरापीठ या तारापुर में वामाक्षेपा बाबा के निकट आएं हैं। उन्होंने बाबा से पुछा – ''माँ का विसर्जन क्यों दिया जाता है बाबा?''

बाबा ने कहा –''अरे, माँ का विसर्जन क्यों बोलते हो बाबा? भक्त माँ की प्राण प्रतिष्ठा करते हुए तीन दिन पूजा-आराधना में आनन्द उपभोग करके माँ को मानस सरोवर में डूबाकर रखते हैं, यही होता है विसर्जन बाबा। मेरी माँ त्रिभुवन व्यापी हैं, क्या उनको नदी-नाला में विसर्जित किया जा सकता हैं? भक्त के निकट वे फिर इतनी छोटी हो जाती हैं कि भक्त के हृदय-जल में माँ स्वत: ही डूबती-उतराती हैं। 'माँ! यह तेरी आप्तभाव में गुप्तलीला है।' – यह कहकर वामाक्षेपा बाबा अपने मन ही मन में बात करने लगे, जैसे किसी अदृश्य देवी के साथ बात कर रहे हैं। –

''प्रथमे पूजिता स च कृष्णेण
मधुकैटभ भीतेन ब्रह्मणा द्वितीयत,
त्रिपुर प्रोषिते नैव तृतीया स त्रिपुरारिणा
भ्रष्टाश्रिया महेन्द्रेन चतुर्थे पूजिता देवी।।''

–(देवी भागवत ३०/३०/२१)

अर्थात, प्रथम विष्णु, द्वितीयत: महादेव, तृतीयत: ब्रह्मा एवं चतुर्थत: इन्द्र देवी दुर्गा की पूजा की थी।

''यदेयं भ्राम्यते विश्वं योगिभिर्या विचिन्त्यते।
यद्मासा भासते विश्वं नैका दुर्गा जगन्मयी।।''

–(सामवेद)

–यह विश्व जिसके द्वारा भ्रम-विलसित होता है, जो योगीगण के लिए चिन्तनीय है, जिनके तेज:प्रभाव से समस्त जगत् प्रकाश पा रहा है, जगन्मयी वह दुर्गा ही परम तत्त्व है।

राजा सुरथ, वैश्य समाधि, अवतार श्रीरामचन्द्र, महर्षि कात्यायन, मेधस, विश्वामित्र, भृगु, वशिष्ठ व कश्यप ऋषि ने दशभुजा माँ दुर्गा की पूजा कर विपद से उद्धार पाया था। दुर्गम संसार तारिणी तरणी है माँ, इसलिए उनका नाम 'दुर्गा' हैं। माँ अब्ज एवं असंगा, अद्वितीया और दुर्ज्ञेया हैं। माँ, तुम नारायणी, स्वर्गमुक्ति प्रदायिनी हो। कालरूप में अवस्थित हो, इसीलिए तुम कलास्वरूपिणी हो। त्रिगुण तुम्हें आश्रय करते हुए अवस्थान करता हैं, इसीलिए तुम त्रिगुणमयी हो। वैप्रचित्त दानव का संहार कर तुम हुई रक्तदन्तिका। अनावृष्टि के समय वृष्टि दान करती हो, इसीलिए तुम शताक्षी। तुम्हारे देह में शाक उत्पन्न हुए थे इस कारण तुम्हें शाकंभरी कहा जाता है। हिमाचल में राक्षसों सें मुनिगण की रक्षा की थी, इसीलिए तुम हो भीमा देवी। भ्रमर रूप में अरुपाक्ष का वध कर तुम हुई भ्रामरी। दुर्गम असुर-निधन कर तुम हुई दुर्गा। ब्रह्मा-विष्णु एवं अन्यान्य देववृन्दों के देह से निर्गत तेज सम्मिलित हो कर एक अपरूप ज्योतिर्मयी देवी का आविर्भाव हुआ। शम्भु के तेज द्वारा मुखमंडल, याम्य के तेज से केशगुच्छ, वैष्णव तेज से बाहु। चन्द्र, इन्द्र, वरुण एवं पृथ्वी के तेज से स्तन युगल, मध्य भाग, जंघा, उरुदेश एवं नितम्ब। ब्रह्मा, सूर्य, अष्ट-वसु और कुवेर के तेज द्वारा चरण-द्वय, अंगुलादि समूह एवं नासिका। प्रजापति दक्षादि के तेज से देवी के दन्त, आग्नेय तेज द्वारा त्रिनयन, संध्या के तेज से भ्रू-द्वय, वायु के तेज से कर्ण-द्वय एवं अन्यान्य देवगण के तेज पुंज से अन्यान्य अवयव प्रकटित हुए। महादेव ने शूलास्त्र प्रदान किया, विष्णु ने दिया चक्र, वरुण शंख, हुताशन शक्ति, वायु धनुर्वान, इन्द्र वज्र और ऐरावत हस्ती का घंटा, यम कालदंड, वरुण पाश, प्रजापति ब्रह्मा अक्षमाला व कमंडल, दिवाकर किरण, यम खड्ग व चर्मफलक, क्षीर समुद्र ने प्रदान किया किरणशाली हार, अविनश्वर वस्त्रयुगल, मनोरम शिरोरत्न कुन्तल वलय, शुभ्र अर्द्ध-चन्द्र, बाहु भूषण, केयूर, निर्मल नूपुर, ग्रीवा-भरण समस्त अंगुलि में श्रेष्ठ अंगुरीय, विश्वकर्मा ने दिया निर्मल कुठार, अन्यान्य अस्त्र, अभ्रभेद कवच, जलनिधि ने दिया मस्तक पर एवं वक्षस्थल पर अम्लान पद्ममाला और सुन्दर क्रीड़ा कमल, हिमालय ने दिया सिंह और नानाविध रत्न, धनपति कुवेर ने दिये सुरापूर्ण पान पात्र, सर्वनागाधिपति अनन्तदेव ने नागहार प्रदान किया। हे माँ भगवती दुर्गे! तुम सौभाग्यवान के गृह में लक्ष्मी हो, हतभाग्य के लिए

अलक्ष्मी हो, सत् व्यक्ति के हृदय में बुद्धि स्वरूपा हो एवं असत् के लिए अज्ञान हो, साधु के लिए विद्या एवं असाधु के हृदय में अविद्यारूप में विराजती हो। तुम ही साधुगण की श्रद्धा, सत्कुल समुत्पन्न व्यक्ति की लज्जा स्वरूपिणी हो। तुम कैटभहारी हरि के हृदयवासिनी लक्ष्मीदेवी के रूप में विराजती हो, फिर पार्वती के कोष से शिवारूप में आविर्भूत हुई हो, इस कारण तुम 'कौषिकी' हो। तुम्हारे आविर्भाव से पार्वती कृष्णवर्णा होकर 'कालिका' बन गई। चंड-मुंड का वध कर तुम्हारा नाम हुआ 'चामुंडा'। अनुग्रहाश्रित भक्त भक्ति द्वारा जिसको विश्वेश्वरी स्वरूप में दर्शन करते हैं, उसको 'भगवती दुर्गा' कहा जाता है, वे ब्रह्म-तत्त्व स्वरूपिणी हैं। जो माँ तारा हैं वही देवी दुर्गा हैं। तारा-दुर्गा अभेद शक्ति हैं।''

तत्पश्चात् वामाक्षेपा बाबा के महाभाव को भंग करते हुए पंडित महाशय ने पूछा – ''बाबा, सगुण ब्रह्म की उपासना का प्रवर्त्तक है कौन?''

बाबा – ''सांडिल्य मुनि ही सगुण ब्रह्म की उपासना अथवा भक्ति मार्ग के प्रवर्त्तक है। निर्गुण ब्रह्म निर्विशेष व निष्कृय है; उसको सृष्टिकर्त्ता, ईश्वर या भगवान कुछ भी नहीं कहा जा सकता। तत्त्व में जो निर्गुण हैं लीला में वह ही सगुण हैं। वे निर्गुण होकर भी सगुण हैं, निराकार होकर भी साकार हैं। यह उनकी माया अथवा योग है। माया ही विश्व-जननी हैं, माया व्यतीत विश्व का उद्भव नहीं हो पाता, माया के विनाश होने पर ही तत्त्वज्ञान उत्पन्न होता है। तब मन में विश्व-भ्रान्ति और नहीं रहती। भक्ति के प्रभाव से जीव वासना-कामना मुक्त होकर विशुद्ध अवस्था प्राप्त करता है। जैसे एक स्वर्णकार सोने को अग्नि में दग्ध कर विशुद्ध करता है और उसको मलहीन कर देता है, यह भी वैसे ही है।

पंडित महाशय – ''सत्ता में भक्ति का जागरण कैसे होता है, बाबा?''

बाबा – ''श्रद्धा के पश्चात् निष्ठा होने पर भक्ति जागृत होती है। फिर भक्ति आट प्रकार की है – ज्ञान-भक्ति, प्रेम-भक्ति या राग-भक्ति, वैधि-भक्ति, श्रद्धा-भक्ति, विज्ञान-भक्ति, अहेतुकी-भक्ति, उर्ज्जिता भक्ति एवं मधुर-भक्ति।

इतना कहकर बाबा निश्चुप हो गए। भक्तगण भक्तिपूर्ण भाव में बाबा को प्रणाम करते हुए अपने अपने गृह में चले गए।

(बंगला ''तारापीठ भैरव'' पुस्तक से संगृहीत)

–हिन्दी अनुवाद - मातृचरणाश्रित श्रीविमलानन्द